श्रुतदीप रिसर्च फाउंडेशन का संवाद-सेतु

श्रुतदीप

विक्रम संवत २०७८ • वर्ष : ६ • अंक : १ • जून २०२२

शाश्वत ज्ञान की विरासत-हस्तलिखित पांडुलिपियाँ.....

- वैराग्यरतिविजय

आज विश्व में सैकडों धर्म और हजारो संप्रदाय हैं। प्रत्येक धर्म अथवा संप्रदाय की भिन्न-भिन्न मान्यताएं हैं। किसी की मूर्तिपूजा में श्रद्धा है तो किसी को शब्द-अर्थ संपन्न अक्षररूपी ग्रंथों में विश्वास है। कोई निराकार का उपासक है, कोई साकार का उपासक है। जिस धर्म परंपरा में मूर्तिपूजा स्वीकार्य नहीं है वहां धर्मशास्त्र (पोथी) को स्वीकार्य माना गया है। मूर्तिपूजा की परंपरा में भी पोथी के रूप में ज्ञान को आदरणीय स्थान प्राप्त है।

भारत प्रारंभ से ही पोथी पूजक अवधारणा का केंद्र रहा है। शाश्वत मूर्तिपूजा में श्रद्धा रखनेवालों ने भी उतनी ही श्रद्धा से पोथी को भी पूजनीय माना है। समग्र भारतीय उपमहाद्वीप में भगवान के बाद सबसे ऊंचा स्थान पोथी को प्राप्त है। आसाम से अमृतसर तक और श्रीनगर से श्रीलंका तक पोथी पूजन को विशिष्ट महत्त्व प्राप्त है। प्रत्येक धर्म अथवा संप्रदाय ने पोथी को भगवान जितना ही पूज्य स्वीकार किया है। ऐसा भी नहीं कि जिन्हें अक्षर ज्ञान है अथवा पढे लिखे शिक्षित है वे ही पोथी का महत्त्व समझते है बल्कि सामान्य वर्ग भी पोथी की हृदय से भक्ति करता है।

भारतीय चिंतन परंपरा के मतानुसार मूर्ति ध्यान परंपरा की वाहक है और पोथी ज्ञान परंपरा की संवाहक है। मूर्ति में ध्यान के निगूढ रहस्य समाये हैं और पोथी में जगत के सर्वोत्तम सत्य छिपे हैं। पोथी में शाश्वत ज्ञान की विरासत भी संकलित है और साथ ही वैज्ञानिक तथ्य भी समाहित है। प्राचीन पोथियों में भूले-बिसरे अक्षरों की दुनियां के साथ तत्कालीन सामाजिक व्यवस्था का प्रतिबिंब भी झलकता दिखाई पडता है जो वर्तमान जीवन व्यवस्था के लिए केवल प्रासंगिक ही नहीं अपितु बहुउपयोगी भी है।

मूर्ति बोलती नहीं है, पोथी बोलती है। मूर्ति मौन सिखाती है, पोथी भाषा सिखाती है। पोथी अक्षरों के माध्यम से लिपियों के इतिहास का दरवाजा खोलती है। पोथी अर्थ के माध्यम से प्राचीन इतिहास और शाश्वत ज्ञान से परिचय कराती है, विषय के माध्यम से भिन्न-भिन्न विद्याशाखाओं से जोडती है, चित्र और सुशोभन के माध्यम से कला का इतिहास दर्शाती है। ऐसे अनेक कारणों से भारत में पोथी भगवान की तरह पूजी जाती है।

भारत के ईशान्य प्रांत में बहते ब्रह्मपुत्र नदी के बीच मजुली नामक एक छोटासा द्वीप है। यहां छोटी संख्या में एक विशेष जाति के लोग रहते हैं। मुख्यरूप से ये लोग पूजारी का काम करते हैं। यहां के कुछ लोग संगीत और काष्ठकला के जानकार है। वर्तमान इक्कीसवीं सदी के अति आधुनिक काल में भी ये लोग पांच सौ वर्ष पूर्व चली आ रही अपनी पारंपारिक जीवनशैली का अनुसरण करते हैं। पूरे वर्ष यहां चारों तरफ हरियाली छायी रहती है। शहरों की तरह यहां समय भागता नहीं है। अधिकांश लोग प्रायः सफेद वस्त्र पहनते हैं और मस्तक पर केसर का तिलक लगाते हैं।

द्वीप के बीचोबीच एक नामघर है, जहां सामूहिक अथवा व्यक्तिगत पूजा होती रहती है। नामघर की निर्मिति एकदम सीधीसादी होती है। घांस और लकडियों की छप्पर और दिवारे होती है। जमीन मिट्टी से लिपी होती है। नामघर में कोई भी चित्र अथवा मूर्ति नहीं होती है। मुख्यद्वार के सामने की दीवार से सटी एक बडी सी लकडी की पेटी रखी होती है जिसके भीतर भागवत पुराण की पोथी रखी होती है। भागवत पुराण वैष्णवों का सबसे महत्त्वपूर्ण शास्त्र है। इस पोथी को यहां के लोग दुनियां की तमाम वस्तुओं से बढकर महत्त्व देते हैं। केवल विशेष प्रसंग पर पेटी की पोथी का पूजन होता है। एक अन्य पोथी की रोजाना पूजा होती है। यहां का छोटा बच्चा भी जानता है कि, पेटी में हमारी महत्त्वपूर्ण और पूजनीय वस्तु रखी है। नामघर में प्रवेश करने वाला प्रत्येक व्यक्ति पेटी पर अपना मस्तक टिकाकर नमस्कार करता है।

नामघर में रोजाना पूरा समाज आकर समर्पक भाव से उपासना करता है। दिनभर लोग आते-जाते रहते हैं। कुछ शब्दमय धुन चलती है। संगीत बजता रहता है। नामघर में पेटी के बाहर रखी पोथी की दूसरी प्रत को रोजाना खोला जाता है। उसे लकडी की एक चोकी पर विराजित किया जाता है। धूप-दीप जलाए जाते है। एक पूजारी पोथी के पन्ने को आदरभाव से अपने मस्तक से स्पर्श करता है। फिर जमीन पर बैठकर उस पन्ने पर लिखे श्लोकों का राग के साथ पठन करता है। उपस्थित लोग ध्यान से श्रवण करते है। वांचन पूरा होने के बाद सब लोग पोथी को साष्टांग नमस्कार करके विदा होते हैं।

वर्तमान भारत के वायव्य में स्थित पंजाब प्रांत के अमृतसर में स्वर्णमंदिर है। यह सीख संप्रदाय का पवित्रतम गुरुद्वारा है। मंदिर विशाल जलाशय के बीचोबीच बना है। पूरा मंदिर सोने के पतरें से मढा है। सीखपंथ के दस गुरुओं की वाणी का संग्रह यहां ग्रंथरूप में स्थापित किया गया है। इस पवित्र ग्रंथ को गुरु ग्रंथसाहिब कहा जाता है। सीख समुदाय इस ग्रंथ को भगवान मानकर पूजता है। पूरे दिन गुरु ग्रंथ साहिब के सम्मुख कीर्तन चलता है। रात होने के पश्चात् पवित्र ग्रंथ को शृंगारित वस्त्रों से ढककर सिंहासन पर विराजमान करके एक पालखी में बैठाकर पूरे मंदिर की परिक्रमा की जाती है। परिक्रमा मार्ग को पहले शुद्धजल से पावन किया जाता है। अंत में शोभायात्रा अकाल तख्त पहुंचती है जहां गुरु ग्रंथ साहिब विश्राम करते हैं। दूसरे दिन सुबह फिर गुरुग्रंथ साहिब को अकाल तख्त से सुवर्णमंदिर में स्थापित किया जाता है। सीख संप्रदाय की आराधना का मुख्य केंद्रस्थान गुरुग्रंथसाहिब ही है। उनका मानना है कि गुरु ग्रंथ साहिब का प्रकाश जगत को प्रकाशित करता है। श्रद्धालु यहां मस्तक टिकाकर गुरु ग्रंथ साहिब को प्रणाम करते है उन्हें पीठ न लगे इस सतर्कता के साथ पिछले कदमों से चलकर विदा होते हैं।

समर्पित सीख परिवार के घर में एक छोटा सा मंदिर होता है जिसे गुरुद्वारा कहा जाता है जिसमें गुरु ग्रंथ साहिब विराजमान होते हैं। परिवार के दिन की शुरुआत ग्रंथ साहिब की उपासना से होती है।

संपूर्ण भारत में आषाढ सुद पूर्णिमा, गुरुपूर्णिमा के रूप में मनायी जाती है। हिंदु परंपरा में कृष्ण द्वैपायन व्यास अठारह पुराण और महाभारत के रचयिता माने गये हैं। उनकी स्मृति में गुरुपूर्णिमा के दिन गुरु से आशीर्वाद प्राप्त करने की परंपरा है। इस दिन भिन्न-भिन्न शास्त्रों की पोथियां सजाकर चौपायी पाट पर विराजित की जाती है। भक्तगण भजन धून के साथ उनकी पूजा-अर्चा करते हैं। मूर्ति की तरह ग्रंथ की पूजा अर्चा की जाती है। ग्रंथों पर केसर का तिलक किया जाता है।

बंगाल में प्रतिवर्ष मार्गशीर्ष पूर्णिमा के दिन सरस्वती पूजन होता है। हाथों में पुस्तक थामे सरस्वती की मूर्ति को पलाश के फूलों से सजाया जाता है। अनेक स्थानों पर सामूहिक

सरस्वती पूजन का भव्य आयोजन होता है। छोटे बालक से प्रथमाक्षर लिखवाने का यह पवित्रतम दिवस माना जाता है। श्वेतांबर जैन परंपरा में कार्तिक सुद पंचमी का दिन ज्ञान पंचमी के रूप में मनाया जाता है। इस दिन पावन ग्रंथों के संग्रह सार्वजनिक रूप से खोले जाते हैं। लकडी की पीठिका पर उन्हें विराजित कर धूप-दीप और स्तुति-स्तवना के साथ उनकी पूजा की जाती है। ज्ञान के उपकरण रखे जाते है। अक्षत-नैवेद्य-फल आदि से पूजा संपन्न होती है।

दिगंबर जैन परंपरा में ज्येष्ठ सुद पंचमी का दिन श्रुतपंचमी के रूप में मनाया जाता है। इस दिन जिनवाणी की पूजा की जाती है। इसी तरह दीवाली के दिन भी श्रुत की पूजा की जाती है।

प्राचीन भारत में ग्रंथ की पूजा (पोथी पूजा) केवल उसे ज्ञानप्राप्ति का स्त्रोत मानकर ही नही की जाती थी बल्कि शास्त्र को श्रद्धा का महत्त्वपूर्ण अंग माना जाता था। उस काल में ज्ञानग्रंथ जीवनशैली का अविभाज्य हिस्सा बनकर दैनंदिन जीवन में समाये होते थे। वह काल पोथी लेखन की परंपरा का सुवर्णकाल था। पोथी पूजा की तरह पोथी लेखन की भी अद्भुत परंपरा थी।

राष्ट्रीय पांडुलिपि प्रतिष्ठान (दिल्ली) द्वारा किये गये सर्वेक्षण से ज्ञात हुआ कि भारत में लगभग फिलहाल देढ करोड हस्तलिखित पांडुलिपियां उपलब्ध है। प्रतिष्ठान की संग्रह सूचि में १ करोड प्रतियां ही दर्ज हो पायी हैं। प्रो डेविड पिन्ग्री नामक विद्वान ने अपना पूरा जीवन भारत की प्राचीन हस्तप्रतों के अध्ययन में बिताया था, उनका अनुमान था कि संपूर्ण भारत के घोषित संग्रहालयों एवं अप्रगट सार्वजनिक एवं व्यक्तिगत संग्रहों को मिलाकर देखा जाये तो भारतीय उपमहाद्वीप में भौगोलिक दृष्टि से हस्तप्रतों का विस्तार क्षेत्र उत्तर में हिमालय से

लगाकर दक्षिण में श्रीलंका तक है और पश्चिम में अफगानिस्तान से लेकर इंडोनेशिया तक है। साथ साथ पाकिस्तान, तिब्बत, वर्तमान बांग्लादेश और चीन के पश्चिमी भाग (जिन झेन) आदि का समावेश होता है। उस काल में इन तमाम क्षेत्रों में हस्तलेखन की परंपरा परवान पर थी। इस समूचे भूभाग में कुल तीन करोड से भी अधिक तादात में हस्तप्रतें होने का अनुमान प्रो. डेविन पिन्ग्री ने लगाया था। उपरी नजर से यह आंकडा काफी बडा दिखाई देता हो मगर अकेले भारत के भीतर संगृहीत हस्तप्रतों की तादात को देखते हुए कदाचित इस तथ्य में तिलमात्र अतिशयोक्ति नही मानी जा सकती है। उदाहरणार्थ आज वर्तमान समय में अकेले जैन हस्तप्रतों के संग्रहों में उपलब्ध प्रतों की संख्या ही इस बात की पुष्टि करती है। कोबा में ढाई लाख, ला. द. संस्कृति विद्यामंदिर में एक लाख, बिकानेर के व्यक्तिगत ९ भंडारों में तकरीबन देढ लाख से अधिक प्रतियां संगृहीत हैं। बनारस की सरस्वती भवन लायब्रेरी में एक लाख, दिल्ली के विविध संग्रहो में ८५ हजार, तंजावर सरस्वती महल लायब्रेरी में ५० हजार प्रतियां उपलब्ध है। इनके अलावा शेष भारत के अगणित प्रगट और अप्रगट संग्रहों का आंकडा बाहर ही नहीं आया है।

इस्वी सन्२००४-२००५ में राष्ट्रीय पांडुलिपि मिशन (NMM) ने एक वर्ष के सर्वेक्षण में मात्र बिहार, उत्तरप्रदेश और उडीसा में ही लगभग साडेतीन हजार संग्रहों की जानकारी हांसिल की थी। प्राचीन काल में तत्कालीन राजा महाराजाओं ने अनेक व्यक्तिगत संग्रहालयों की स्थापना की थी। उनकी जानकारियों को तो अब तक छुआ भी नहीं गया है। उस काल में

छोटे-छोटे गांवों में भी असंख्य ब्राह्मण परिवारों के घरों में हस्तप्रत लेखन एवं संग्रह की परंपरा थी। गांव, शहर और छोटे बडे जनपदों की संस्कृत पाठशालाओं में भी हस्तप्रतों का संग्रह होता था। इन विद्याकेंद्रों में विद्या की तमाम शाखाओं के विषयों के अभ्यास हेतु ग्रंथ संगृहीत रहते थे। तर्क, दर्शन, आयुर्वेदचिकित्सा, भाषाशास्त्र, विधि, गणित, योग, तंत्र, रहस्य, धर्म, काव्य, नाट्य, ललित साहित्य, भूगोल, खगोल, अर्थ, काम आदि तमाम क्षेत्रों के विषयों के ज्ञान का अभ्यास हस्तप्रतों के आधार पर संचालित था। हजारों वर्षों से चली आ रही ज्ञान की परंपरा के शिखर को ऊंचा उठाये रखने में हस्तप्रतें मददगार बनी हैं। हाल के विगत ढाई हजार वर्षों का इतिहास भी उसी धारा में प्रवाहित होता आया है। हस्तलेखन भारत की गौरवमयी गाथाओं का अविभाज्य सूत्रधार रहा है।

भारतीय उपमहाद्वीप में आजतक हस्तप्रतों को भगवान (ईश्वर) के समान पूजनीय स्थान प्राप्त होता आया है। जिस तरह भगवान की प्रतिमा को मंदिर जैसे पवित्र स्थान पर प्रतिष्ठित किया जाता है उसी भाव के साथ हस्तप्रतों को भी सरस्वती मंदिरों (संग्रहालयों) में संजोकर रखे जाने की परंपरा आज तक चली आ रही है। विक्रम की १९वीं सदी तक यह परंपरा विशेष रूप से अखंडित रही। कालांतर में ईस्लामी आक्रांताओं के आक्रमणों से बेशुमार हस्तप्रत संग्रहालय नष्ट हो गये। पश्चात अंग्रेजों की नजर इस पर आकर्षित हुई। उन्होंने असंख्य प्रतें विदेशों में पहुंचा दी। इन सब कारणों के बावजूद १९वीं शताब्दी तक बचे-खुचे संग्रहों के संरक्षण का काम चलता रहा। उसके बाद यह परंपरा धीरे-धीरे लोप होती गई।

हस्तप्रतों के संरक्षण की समर्पक परंपरा टूटने के पीछे दो अहम कारण थे। पहला यह कि सामाजिक परिवेश में बदलाव आ गया। आधुनिक औद्योगिक क्रांति ने प्राचीन जीवन शैली

का चेहरा-मोहरा ही बदल दिया और शिक्षा की समूची दिशा बदल गयी। फलस्वरूप प्राचीन भाषा, लिपि और हस्तप्रत लेखन के साथ हस्तप्रतें भी कालबाह्य हो गई। दूसरा अहम कारण था मुद्रण कला का उद्भव और उसमें आधुनिक क्रांति। मुद्रणकला के विकास ने हाथ से कलम छुडवा ली। हस्तप्रतों के प्रतिलेखक बेरोजगार होकर अन्य कार्यक्षेत्र में चले गए। प्रतिलेखकों के अभाव में हस्तप्रत लेखन की कला का पर्व भी अस्त हो गया। परिणाम स्वरूप प्राचीन लिपि के जानकारों की वंश परंपरा भी खंडित हो गयी। मुद्रित आवृत्तियां सहज उपलब्ध होने लगी और हस्तप्रतों की उपयोगिता शून्य होती चली गई। एक भरी-पूरी गौरवशाली परंपरा विराम प्राप्त कर गयी। वैसे हस्तप्रतों के विनाश की शुरुआत तो मुगलकाल से ही शुरु हो गयी थी। उसके बाद अन्य कई कारणों से पिछली दो शताब्दियों में एक अनुमान के मुताबिक लगभग प्रतिसप्ताह औसतन सौ हस्तप्रतें लगातार नष्ट होती गई। कदाचित ये दुर्घटनाएं ना घटी होती तो हमारे शाश्वत ज्ञान की अनमोल विरासत का स्वरूप आज कुछ और ही होता।

उपरोक्त कुछ विपरीत परिस्थितियों के बावजूद कुछ शक्तियों ने अपनी क्षमता से काफी हस्तप्रतों को संजोये रखा। अनेक प्रतों को नष्ट होने से बचाया। संरक्षण की इस परंपरा को जीवित रखने में श्रमणों की सबसे बडी भागीदारी रही है। श्रमण परंपरा में जैन, बौद्ध और गोशालक द्वारा स्थापित आजीवक परंपरा का समावेश होता है। उस काल में इन तीनों परंपरा के श्रमण जब चातुर्मास काल में एक स्थान पर स्थिरता करते थे, तब अपने स्वाध्याय के लिए जहां जहां संग्रहालयों में हस्तप्रतें उपलब्ध होती वहां से उनका उपयोग करते थे और उनकी सुरक्षा का नियोजन भी करते थे। नये संग्रहों की स्थापना भी करते थे। भारतीय उपमहाद्वीप में ऐसे अनेक विहार, मठों आदि में यह परंपरा चलती थी। इसके उपरांत उस काल में स्थित अनेक विद्यापीठ भी हस्तप्रतों की आवश्यकता को लक्ष्य में रखकर उनका संग्रह करते थे। अनेक विश्वविद्यालयों में बडे बडे संग्रहालय प्रचलित थे। नालंदा (बिहार), वलभी

(गुजरात), जगदल्ला (बंगाल), औदंतपूरी (बिहार), सोमपुरा (वर्तमान बांग्लादेश) जैसे विश्व के श्रेष्ठतम विद्यापीठों में हस्तप्रतों के माध्यम से शैक्षणिक व्यवस्थाएं कार्यशील थी।

चीनी यात्री ह्वानत्संग ने लिखा है कि, सातवीं सदी के मध्य दो लाख से अधिक बौद्ध भिक्षुक भारतीय विद्याशाखाओं का अध्ययन करते थे जिनका आधार हस्तप्रतें रही।

उपलब्ध इतिहास में जैन श्रमणों का योगदान कम आंका गया है मगर वास्तविकता यह है कि जैन श्रमणों ने हस्तप्रत लेखन और हस्तप्रत संग्रह की निरंतर परिश्रम से लंबी शृंखला बनायी है। नालंदा में असंख्य जैन श्रमण अध्ययन करते थे। उनकी गणना भी बौद्ध भिक्षु के रूप में कर दी गयी।

विदेशी आक्रांताओं द्वारा नष्ट किये गये विद्यापीठों में रखी हस्तप्रतों के विनाश का इतिहास भी कम बर्बर नहीं था। बारहवीं सदी में मोहम्मद बख्तियार खीलजी ने अधिकांश विद्यापीठों का विध्वंस किया। इन तमाम विनाश लीलाओं के बावजूद वैदिक और बौद्ध हस्तप्रतों की तुलना में जैन हस्तप्रत संग्रह कुछ अंशों में काफी सुरक्षित रह पाये है। महाराजा कुमारपाल और मंत्रीश्वर वस्तुपाल, मंत्री पेथड शाह, संग्रामसिंह सोनी और आभू शेठ जैसे राजकीय सत्ता से जुडे श्रेष्ठियों द्वारा स्थापित सिद्धांतकोषों जैसे महत्त्वपूर्ण हस्तप्रत दस्तावेजों को इस्लामी आक्रांताओ ने काफी नुकसान पहुंचाया मगर अनेक दीर्घ दूरदर्शी आचार्य भगवंतों की श्रुतनिष्ठा के प्रताप से काफी कुछ साहित्य बच पाया है और आज अनेक ग्रंथभंडारों में वह समुचित व्यवस्था में संरक्षित है।

मुगल सत्ता काल में हस्तप्रत भंडारों के नष्ट होने का सदा भय बना रहता था। इस कारण उस समय जैन भंडारों की जानकारियां सार्वजनिक नहीं की जाती थी। केवल जैन साधुओं तक ही उन्हें सीमित रखा जाता था। जैन विद्वानों को तत्कालीन संस्कृति और अन्य दर्शनों के तुलनात्मक अध्ययन में काफी रुचि होती थी। उन्होंने भी जैनेतर ग्रंथों की हस्तप्रतें लिखवाई। इस कारण वर्तमान जैन हस्तप्रत भंडारों का महत्त्व जैन ज्ञानसंपदा के साथ साथ भारतीय संस्कृति आदि की दृष्टि से भी महत्त्वपूर्ण है।

भारत में इतनी विशाल और विविधता संपन्न हस्तप्रतों की विरासत उपलब्ध होने के बावजूद आज हस्तप्रतों के लिए सुसंगठित और सुनियोजित रूप से कार्य करने वाली संस्थाओं की संख्या अत्यंत अल्प हैं। इसवी सन १९८३ में तत्कालीन प्रधानमंत्री अटलबिहारी वाजपेयी के नेतृत्व वाली सरकार ने हस्तप्रतों के संरक्षण के शुभाशय से राष्ट्रीय पांडुलिपि मिशन (NMM) की स्थापना की थी मगर वह भी अपर्याप्त रही। व्यक्तिगत अथवा सार्वजनिक शोध संस्थानों की संख्या भी नगण्य है। उनकी व्यापकता भी काफी मर्यादित है। सर्वग्राही एकजुटता और समग्रता से काम करने वाली ठोस गतिविधियां कहीं नजर नहीं आ रही हैं। जैन संघों के पास विश्व का सबसे बडा हस्तप्रत संग्रह है। यह विपुल संग्रह विविध संघों अथवा संस्थाओं के नियंत्रण में सिमटकर पडा है। एक तरफ उपेक्षा और दूसरी तरफ हस्तप्रतों के महत्त्व का ज्ञान न होने के कारण अनेक ग्रंथ भंडार समुचित व्यवस्था के अभाव में जर्जर पडे हैं। व्यक्तिगत आग्रहों के कारण हस्तप्रतों के परस्पर आदान-प्रदान की परंपरा कठिन हो गई है। बदनसीबी तो यह है कि जैन संघों के पास कहां, कितनी हस्तप्रतें पडी है इसका कोई हिसाब नहीं है। अनेक भंडारों के तो सूचिपत्र भी तैयार नहीं है और अगर कहीं है तो उनकी प्रामाणिकता भी संदेहप्रद है। हर दृष्टि से संपन्न आज का जैन संघ अपनी महानतम विरासत से पूरी तरह अनभिज्ञ है।

इस्लामी परंपरा की हस्तप्रतों की सुरक्षा और संवर्धन के लिए इस्लामिक मेन्युस्क्रिप्ट असोसिएशन नामक विश्वस्तरीय संस्था की स्थापना हुई है। यह संस्थान पूरे विश्व में उपलब्ध ईस्लामी हस्तप्रतों की खोज करके उनकी नियोजन बद्ध व्यवस्था करती है। संशोधन करने वालों के लिए मददगार बनती है। उन तमाम लायब्रेरियों एवं म्युजियम को संस्था अपना सदस्य बनाती है जिनके पास उनकी परंपरा की हस्तप्रतें उपलब्ध है। आज ७०० से अधिक व्यक्ति अथवा संस्थाएं इस संगठन से जुडे हुए है। भारत से राष्ट्रिय पांडुलिपि मिशन (NMM) के अलावा पांच अन्य बडी संस्थाएं इस वैश्विक संगठना के सम्य है। संगठन अपनी सदस्य संस्थाओं को अनुदान देता है और मार्गदर्शन भी करती है। वर्ष में दो बार प्रशिक्षण कार्यशाला का आयोजन करती है। युनिवर्सिटी ऑफ कँब्रीज के प्रिंस अलाउद्दीन बिन तलाल ईस्लामिक सेंटर के साथ उसका एफिलिएशन (विशिष्ट संबंध) है।

THE ISLAMIC MANUSCRIPT ASSOCIATION

इसी भांति युरोप में भी हस्तप्रतों के मध्यकालीन इतिहास एवं संस्कृति विषयक अध्ययन के लिए सक्रिय व्यवस्थाएं हैं। हस्तप्रतों में उल्लेखित बाईबल की बातें विज्ञान से कितनी सम्मत है? इस विषय पर यहां निरंतर शोध और संशोधन चलते रहते हैं। ऐसे उपक्रमों के लिए चर्च भारी आर्थिक मदद करता है। भारत में सर्वाधिक हस्तप्रतें उपलब्ध है। हस्तप्रतों का सबसे ज्यादा गौरवशाली इतिहास है मगर यहां इस विषय को लेकर किसी भी तरह की परिपूर्ण संगठनात्मक व्यवस्था नहीं है। कोई सर्वसमावेशक और समर्पक विचार मंच नहीं है। आज जैन संघों के पास विश्व में सर्वाधिक हस्तप्रतों का संग्रह है मगर उनकी घोर उदासीनता और उपेक्षा का वर्णन काफी दु:खदायी है। तमाम शक्ति संपन्नताओं के बावजूद इस क्षेत्र में चारों तरफ से समर्पक दृष्टि का अभाव है। एकसूत्र नियोजनबद्धता और एकजूट कटिबद्धता के अभाव से शाश्वत ज्ञान की भव्य विरासत आज विलोप के दरवाजे पर खडी है। अगर यही दशा रही तो भविष्य में हस्तप्रतों को पढने वाला ढूंढना भी मुश्किल हो जाएगा।

आज समूचा विश्व विविध संक्रमणों से गुजर रहा है। पृथ्वी पर बसे मनुष्य और समग्र जीव प्रजातियों के अस्तित्व पर कदम दर कदम संकट खडे है। इस महासंक्रमण से मानवीयता को बचाने और इसके कल्याण के लिए जरुरी जीवंत ज्ञान इन प्राचीन हस्तप्रतों में छिपा-दबा पडा है। किसी भी तरह विद्वान संशोधकों की नजरें इस दिशा में सक्रिय बनें यह समय की सर्वोपरी मांग है।

इस क्षेत्र में प्रभावी भूमिका निभाने की जैनसंघों में आज विशेष क्षमता है। हमारे पास प्रचुर संख्या में हस्तप्रतों की उपलब्धि और दूरगामी दृष्टि वाले विद्वान महापुरुषों की मजबूत टीम भी है। आवश्यकता है समर्पक शक्ति, कुशल आयोजन और उपलब्ध संसाधनों का उपयोग। सकल श्री संघ का शीर्षस्थ नेतृत्व एकजूट होकर आगे आये तो जिनशासन का सुनहरा सूरज एक दिन पूरे विश्व को प्रकाशित करे वह दिन दूर नहीं है। इसी शाश्वत ज्ञान की विरासत से जगत के हितार्थ यह देश विश्वगुरु बनने की पूर्णता भी प्राप्त कर सकता है।

(हिंदी अनुवाद-ओम ओसवाल)

समाचार

- लुल्लानगर परिसर में नवनिर्मित आईकोन सोसायटी में श्रुतरत्न पूज्य गणिवर श्री वैराग्यरतिवि. म.सा. की निश्रा में श्री पुखराजजी कासटिया परिवार द्वारा निर्माणाधीन श्री वासुपूज्यस्वामी जिनालय का खनन दि. १२/१२/२०२१ के दिन और शिलास्थापन दि. २३/०१/२०२२ के दिन संपन्न हुआ।

- दि. ०३/०३/२०२२ के दिन आगम मंदिर, कात्रज में संघस्थविर गच्छाधिपति पूज्य आचार्य श्रीमद् दोलतसागरसूरिजी म.सा. की निश्रा में जैन ज्ञानभंडारोनो इतिहास (संपा. मु. श्री हितार्थरत्नवि.) पुस्तक का विमोचन संपन्न हुआ। मुनिश्री प्रशमरतिविजयजी म.सा. के आनंद अंग अंग जाग्यो पुस्तक का भी विमोचन हुआ।

- दि. १४-०४-२०२२ के दिन श्रुतभवन में श्री महावीर भगवान जन्मकल्याणक के पावन अवसर पर नये अभ्यास वर्ग का प्रारंभ और नये कार्यालय का उद्घाटन संपन्न हुआ।

चातुर्मास स्थल और संपर्कसूत्र

पूज्य गणिवर श्री वैराग्यरतिविजयजी म.सा.

श्रुतभवन संशोधन केंद्र, ४७/४८, अचल फार्म, सच्चाई माता मंदिर के पास, कात्रज, पुणे-४११०४६. संपर्क-७७४४००५७२८

पूज्य मुनिराज श्री प्रशमरतिविजयजी म.सा.

श्री स्वप्नदेव केशरिया पार्श्वनाथ जैन श्वे. तीर्थ, भद्रावती, रेल्वे स्टेशन, भांदक, जि. चंद्रपुर-४४२९०२ / फो. ०७१७५ - २६६०३०

पूज्य सा. श्री जिनरत्नाश्रीजी म.सा. आदि

विठ्ठल निवास, अचल फार्म, कात्रज, पुणे-४११०४६. संपर्क-७७४४००५७२८

कार्यविवरण

शास्त्र संशोधन प्रकल्प अंतर्गत **लोकप्रकाश, प्रवचनविचारसार, पं. श्री नेमकुशलजी म.**सा. कृति संपादन और **उपदेशशत सह अवचूरि** का संपादन कार्य चालु है। पू. सा. श्री **मधुरहंसाश्रीजी म. आत्मशिक्षा** का लिप्यंतर कर रही है। पू. सा. **श्री धन्यहंसाश्रीजी म.सा. सम्यक्त्व सप्ततिका सह अवचूरि** का लिप्यंतर कर रही है। अभ्यास वर्ग प्रकल्प के अंतर्गत नई ७ कृतिओं का लिप्यंतर चालु है।

वर्धमान जिनरत्नकोश प्रकल्प अंतर्गत पू. आ. **श्री मुनिचंद्रसू. म.सा.**, पू. आ. **श्री अजितचंद्रसागर म.सा.**, पू. आ. **श्री यशोरत्नसू. म.सा.**, पू.मु. **श्री वंदनरूचिवि.म.सा.**, पू.मु.**श्री क्षेमरत्नवि.म.सा.**, पू.मु.**श्री नीरज मुनिजी म.सा.**, पू.सा.**श्री संबोधिजी.म.सा.**, **डो. जितेंद्र शाह, डो. गोमटेश्वर पाटील, रविना गजभिये** (पी.एच.डी) तथा श्री **महेंद्रभाई जैन** (अहमदाबाद) को हस्तलिखित प्रत संबंधी माहिती प्रदान करने का लाभ मिला। विविध ६ भंडारों का स्केनिंग कार्य हुआ।

प्राचीन श्रुतसंपदा के समुद्धार अर्थे समुदार सहयोग देनेवाले महानुभावों की नामावली

कमला एज्युकेशन सोसायटी, चिंचवड, पुणे
श्री देवीचंदजी केशरीमलजी जैन, पुणे
श्री घाटकोपर जैन श्वे. मू. संघ, घाटकोपर, मुंबई
अभय श्रीश्रीमाळ (अभूषा फाउंडेशन), चेन्नई
श्री किरीटभाई सुंदरलाल शेठ, पुणे
श्री नलिनकांत जीवतलाल दलाल, पुणे
श्री मुलुंड श्वे. मू. जैन संघ एण्ड चेरिटीज, मुलुंड, मुंबई
श्री शंखेश्वर पार्श्वनाथ आराधक ट्रस्ट, अहमदाबाद
श्री हसमुखलाल चुनिलाल मोदी चेरिटेबल ट्रस्ट, मुंबई
श्री रतनजी जीवराजजी मेडतिया, पुणे
स्व. श्री पी. के. श्रॉफ ट्रस्ट, पुणे
श्री कीर्तिकुमार धरमचंद ओसवाल
श्री विमलनाथस्वामी जैन श्वेतांबर टेंपल ट्रस्ट, पुणे
श्री समी जैन संघ पंच वहिवट ट्रस्ट, समी, पाटण
श्री चंद्रवदन प्राणलाल दोशी
श्री जैन श्वे. मू. तपगच्छ संघ, भांडुप, मुंबई
श्री सुजय गार्डन जैन संघ, मुकुंदनगर, पुणे
श्री संदिपभाई जयंतीलाल शाह
देविना डी. झवेरी, सांताक्रुझ, मुंबई
अदिति जैन मंडल
श्री निलेशभाई कमलेशभाई मेहता, हाईड पार्क, पुणे
श्री विरेशभाई शशिकांत पारेख, पुणे
कुसुमबेन मफतलाल शाह,
निर्मलाबेन भोगीलाल शाह
निर्मलाबेन रमणलाल शाह
पुष्पाबेन चिमनलाल शाह
प्रभाबेन चंदुलाल शाह
मायाबेन भरतभाई शाह
लताबेन रमेशभाई बोराना
वसुबेन सुमतिलाल शाह
शोभनाबेन जयंतीलाल शाह
श्री अंबालाल मोतीलाल शाह
श्री मोतीचंद विठ्ठलदास शाह परिवार, पुणे
श्री रमेशभाई मणिलाल शाह
स्मिताबेन दिलीपकुमार वोरा
श्री सुधीरभाई कापडिया, मुंबई
सौ कविताबेन रितेशभाई कोठारी, लेकटाउन, पुणे

सुवाक्य

जिम जिम नीच लवई अणजाणिउ, उत्तम हईडईं नाणईं।
पांन तडफडई वाई अतिघणुं, थड निश्चल निजप्राणई॥१२.३॥

१८ पापस्थानक भास, ब्रह्मर्षि

हवा चलने पर वृक्ष के पत्ते आवाज करते है परंतु थड निश्चल रहता है। उसी तरह बनीबनाई बातों से दुर्जन कोलाहल करता है परंतु सज्जन उनको अपने हृदय में नहीं लेता।

Printed Matter

Posted under clause 121 & 114 (7) of P & T Guide

To,

From : Shrutbhavan Research Centre
(Initiation of Shrutdeep Research Foundation)
47/48, Achal Farm, Nr. Sachchai Mata Mandir, Ahead of Jain Agam Temple, Katraj, Pune-411046
Mo. 07744005728 Email : shrutbhavan@gmail.com Website : www.shrutbhavan.org

For Informative and Inspirational speeches about Shrut please subscribe our Shrutbhavan YouTube channel
Shrutbhavan Pune